उज्जैन से प्रारंभ हुआ विक्रम सम्वत् है भारतीय, गुलामी के प्रतीक हैं शक् संवत् और ईस्वी सन

2 अप्रैल गुड़ी पड़वा पर विशेष लेख

स्वाधीन भारत में संविधान स्वीकार करते समय राष्ट्र गान एवं राष्ट्र ध्वज के साथ-साथ राष्ट्रीय स्तर पर दो सम्वत् अंगीकार किये गये हैं. पहला ईस्वी सम्वत् और दूसरा शक सम्वत्। ये दोनों ही सम्वत् भारत आक्रांताओं और उसे पराधीन बनाने वाली शक्तियों द्वारा प्रवर्तित किये गये हैं. जहाँ तक ईस्वी सम्वत् का प्रश्न है यह एक तरह से इसकी अंतरराष्ट्रीय स्वीकृति की वजह से मान्य किये जाने योग्य है, परंतु शक सम्वत् को भी राष्ट्रीय स्तर पर अंगीकार कर लिया जाना आपत्तिजनक है, आपत्तिजनक होना ही चाहिए।

यह निर्विवाद तथ्य है कि शक हमारे देश में आक्रांता की तरह आये। यह इतिहास सिद्ध है कि मध्य एशिया बर्बर और दुर्दश जातियों का क्षेत्र रहा है। 160-165 ईस्वी पूर्व में घुमक्कड़ जातियों का निष्क्रमण बढ़ा। ह्यूंग नू जाति ने अपने पड़ोस की यूह्ची जाति को पराजित कर अपने राज्य से बेदखल किया तो यूह्ची जाति ने आक्रामक हो अपने पश्चिम में सीर दरिया के उत्तर में रहने वाली जाति शक को पराजित कर उनके स्थान पर कब्जा कर लिया। इसके फलस्वरूप शक जाति विस्थापित होकर दूसरे स्थानों की खोज में बर्बर हो उठी। उसने दक्षिण की ओर रूख किया। शकों की कुछ शाखाओं ने यहाँ-वहाँ घुसपैठ की। 120-140 ईस्वी पूर्व कुछ बर्बर शक बाख्त्री और पार्थव राज्यों पर टूट पड़े। शक हमले करते करते पूर्वी ईरान से होते हुए कन्दहार और बलूचिस्तान होते हुए सिंध और इंडो सिंथिया आ पहुँचे। भारत के उत्तरी-पश्चिमी प्रदेशों में दाखिल होकर शकों ने गुजरात, सिंध में मार-काट मचाते हुए तक्षशिला और पंजाब में काबिज हो गये।

जैन ग्रंथ कालकाचार्य कथा के अनुसार उज्जैन के तत्कालीन राजा से प्रतिशोध लेने के लिए शकों को उज्जैन आक्रमण के लिए प्रेरित किया गया। लगभग 100 ईस्वी पूर्व शकों ने उज्जैन और तत्पश्चात मथुरा पर पर कब्जा किया। और धीरे-धीरे शक उज्जैन केंद्र से भारत के अनेक प्रांतों में दाखिल हो गये। अंत में शकों का सामना स्वतंत्रता प्रिय मालवों से हुआ, जो फिरोजपुर, पंजाब, अजमेर से विस्तारित होते हुए उज्जैन आ बसे थे। मालव गणों ने शकों को पराजित ही नहीं किया बल्कि उन्हें भारत भूमि छोड़ने को विवश किया। मालव गणों ने शकों को परास्त कर अवंति क्षेत्र को मालवभूमि बनाया। इसी तिथि से अवंति मालवा कहलाने लगी और विजय तिथि के स्मारक स्वरूप विक्रम सम्वत् का प्रवर्तन हुआ, जिसे कभी-कभी कृत और मालव सम्वत् के रूप में भी संबोधित किया जाता रहा। सम्वत् प्रवर्तन के साथ साथ नये सिक्के भी चलाये गये. सिक्कों पर अंकित किया गया-
'मालवान (नां) जय(यः)'.
इसी विजय और गण के अवंति में प्रतिष्ठित होने के समय से आगे की काल गणना के लिए मालव सम्वत् या कहें कि विक्रम सम्वत् प्रशस्त हुआ।

भारतीय संस्कृति पर अभिमान करने वालों के लिए यह निश्चय ही गौरव करने योग्य है कि आज भारत वर्ष में प्रवर्तित विक्रम सम्वत्सर बुद्धनिर्वाणकाल गणना को छोड़ कर संसार के प्रायः सभी ऐतिहासिक सम्वतों में प्राचीन है। यह भारत के इतिहास की एक महत्वपूर्ण परिघटना है। विक्रम सम्वत् के उद्भव तक विशुद्ध वैदिक संस्कृति का काल, रामायण और महाभारत का युग, महावीर गौतम बुद्ध का समय, चंद्रगुप्त मौर्य एवं प्रियदर्शी अशोक, पुष्यमित्र शुंग की साहसगाथा, वेद, पुराण, सूत्रग्रंथ एवं स्मृतियों की रचना भारतवर्ष में हो चुकी थी, वैयाकरण पाणिनी और पतंजलि और चाणक्य के पांडित्य तथा राजनीतिक बुद्धिमत्ता चतुर्दिक फैल चुकी थी।

विक्रमादित्य का समय भारशिवनागों, समुद्रगुप्त, चंद्रगुप्त विक्रमादित्य, स्कंदगुप्त, यशोवर्मन, विष्णुवर्द्धन के बल और प्रताप की चमक से विश्व को चमत्कृत करने का समय था, यह ही वह समय था जब दुनिया कई भागों में भारत की संस्कृति व भारत के धर्म की सुगंधि विस्तारित थी। कालिदास, भवभूति, भारवि, भतृहरि, वराहमिहिर, माघ, दंडी, बाणभट्ट, धन्वन्तरि, कुमारिल भट्ट, आद्य शंकराचार्य, नागार्जुन, आदि की रचनाप्रतिभा चतुर्दिक व्याप्त थी।

भारतवर्ष में विक्रमादित्य युग परिवर्तन और नवजागरण की एक महत्वपूर्ण धुरी रहे हैं। और उनके द्वारा प्रवर्तित विक्रम सम्वत् हमारी एक अत्यंत मूल्यवान धरोहर है। यह भारतीयजन के लिए एक शक्ति और आत्माभिमान का स्रोत भी है। यह भी एक बड़ा कारण है कि विदेशी आक्रांताओं ने भारत गौरव तथा ज्ञान संपदा के प्रमाणों, साक्ष्यों, पुस्तकों, स्थापत्यों के सुनियोजित विनाश का अभियान चलाया। हमारी संपदा को विध्वंस किये जाने के प्रमाण लगातार मिलते रहे हैं। इस अभियान को उपनिवेशवादी इतिहासकारों ने भी अपना भरपूर समर्थन दिया. इन सभी की दुरभिसंधि यही थी कि भारत ज्ञान, विज्ञान, शिक्षा, चिकित्सा, आर्थिकी का नहीं बल्कि अंधेरे का क्षेत्र भर था, जिसके उद्धार के लिए गोरांगप्रभु जन ने देश को लूटा, मिटाया और फिर आधुनिक युग में प्रवेश का टिकट दिया, कृपा पूर्वक। उन्होंने दुनिया की तमाम सभ्यताओं के साथ यही कुछ किया. पश्चिम अभिमुख मानस के इतिहासकारों ने इसी क्रम में विक्रमादित्य को भी ध्वस्त करने की सचेत कोशिश की।

ऐसे ही एक इतिहासकार डी. सी. सरकार ने विक्रमादित्य की परंपरा को अनैतिहासिक सिद्ध करने का सघन प्रयास किया। उन्होंने एन्शिएंट मालवा एंड दि विक्रमादित्य ट्रेडिशन की भूमिका में दो टूक कहा कि ईस्वी पूर्व प्रथम शती में पारंपरिक विक्रमादित्य के लिए कोई जगह नहीं है. अलबत्ता उन्होंने माना कि विक्रम सम्वत् की स्थापना विक्रमादित्य ने ही की। लेकिन वह उज्जैन के विक्रमादित्य नहीं हैं. लेकिन विक्रम सम्वत् का अस्तित्व उन्होंने या उन जैसे इतिहासकारों ने स्वीकार किया। स्वीकार इसलिए करना पड़ा उन सभी को, क्योंकि विक्रम सम्वत् भारत के काफी बड़े भूभाग में समादृत रहा है, सदियों से।

लेकिन विक्रमादित्य के अस्तित्व की गुत्थी भी विक्रम सम्वत् की वजह से अधिक उलझी लगती है क्योंकि विक्रम सम्वत् का प्रवर्तन विदेशी आक्रांता शकों की पराजय और उन्हें देश से बाहर भगाने से आबद्ध हैं। और उपनिवेशवादी मानस इस बात को स्वीकारने के लिए तत्पर ही नहीं है कि भारतवर्ष में विदेशियों को मार भगाने का साहस कभी रहा भी था। विक्रमादित्य उन चुनिंदा शासकों में से थे जिन्होंने देश को विदेशी हमलावरों से मुक्ति दिलाई और इस महती उपलब्धि के उपलक्ष्य में

विक्रमादित्य ने विक्रम सम्वत् का प्रवर्तन किया। मान्यता यह भी है कि जनता के ऋण मुक्त होने के अवसर पर उज्जैन में ऋण मुक्तेश्वर महादेव मंदिर तत्समय ही स्थापित हुआ होगा। कथा सरित्सागर में उल्लिखित है ही कि -"न मे राष्ट्रे पराभूतो न दरिद्रो न दुखितः।' विक्रमादित्य सब लोगों के हितों की रक्षा करता था। उसके राज्य में न कोई दुखी था,न दरिद्र था और न कोई पराभूत। शकों पर अप्रतिम विजय के कारण विक्रमादित्य शकारि भी कहलाये और अप्रतिम साहस प्रदर्शन के कारण साहसांक भी।

यह भी ध्यान दिये जाने योग्य है कि विक्रम सम्वत् का प्रवर्तन विक्रमादित्य द्वारा उज्जैन से किया गया। उज्जैन परम्परा से ही काल गणना का एक प्रमुख केंद्र माना जाता रहा और इसीलिए अरब देशों में भी उज्जैन को अजिन कहा जाता रहा। सभी ज्योतिष सिद्धांत ग्रंथों में उज्जैन को मानक माना गया है। आज जो वैश्विक समय के लिए ग्रीनविच की स्थिति है, वह ज्योतिष के सिद्धांत काल में और उसके बाद सैंकड़ों वर्षों तक उज्जैन की रही। यह भी निर्विवाद है कि ज्योतिर्विज्ञान उज्जैन से यूनान और एलेक्जेंड्रिया पहुँचा। काल गणना केंद्र होने से उज्जैन को विश्व के नाभि स्थल की मान्यता भी रही है- 'स्वाधिष्ठानं स्मृता कांची मणिपूरमवंतिका। नाभि देशे महाकालस्यन्नाम्ना तत्र वै हरः।' साथ ही महाकालेश्वर की उज्जैन में अवस्थिति काल के विशेष संदर्भ की द्योतक है। इस प्रकार विक्रम सम्वत् ज्योतिर्विज्ञान के अनुसार भी एक विशेष महत्व रखता है।

विक्रमादित्य के अवसान के बाद उनके वंशज साम्राज्य का संरक्षण नहीं कर पाये अतः शकों ने विक्रम के वंशज को पराजित कर अपना शक सम्वत् चलाया।

शकानां वंशमुच्छेद कालेन कियतापि हि।
राजा विक्रमादित्यः सार्वभौमोपमोऽभवत्।।
मेदिनीमनृणां कृत्वा ऽ चीकरद् वत्सरं निजम।
ततो वर्षशते पंच त्रिषता साधिके पुनः।
तस्या राज्ञोऽन्वयं हत्वा वत्सरः स्थापितः शकैः।।

एक दूसरा मत यह भी है कि शक सम्वत् संभवतः कनिष्क ने चलाया था और उसके समकालीन शक क्षत्रपों और सातवाहनों के राज्यों में इसका काफी प्रयोग होने की वजह से इसका नामकरण शक सम्वत् हो गया। शक चाहे शक शासकों ने प्रारंभ किया या चाहे कुषाण वंश के शासक कनिष्क ने, लेकिन ये शक और कुषाण दोनों ही भारत आक्रांता थे। विदेशियों द्वारा शुरू किये ये सम्वत् को भारत में स्वीकार किया जाना औचित्यपूर्ण नहीं है। वैज्ञानिक अध्ययन के आधार पर सटीक राष्ट्रीय कैलेंडर अंगीकार करने के लिए गठित समिति की वर्ष 1955 में प्रकाशित रिपोर्ट की भूमिका में पं. जवाहरलाल नेहरू ने लिखा कि- "विभिन्न कैलेंडर देश में पिछले राजनीतिक विभाजन का प्रतिनिधित्व करते हैं, जब हमने स्वतंत्रता प्राप्त कर ली है तब यह वांछनीय है कि कैलेंडर में हमारी नागरिक, सामाजिक और अन्य आवश्यकताओं की एकरूपता हो और इस समस्या का निदान वैज्ञानिक आधार पर हो। लेकिन राजनीतिक विभाजन, वैज्ञानिकता, राष्ट्रीयता तथा नागरिक, सामाजिक आवश्यकताओं को अलक्षित करते हुए विभाजन तथा देश की पराजय के प्रतीक सम्वत्सरों को आधिकारिता प्रदान की गयी।